नाम : डॉ लोकेश्वर प्रसाद सिन्हा

महाविद्यालय का नाम : दुर्गा महाविद्यालय रायपुर, छत्तीसगढ़

संकाय : कला

विषय : **परसाई के कथा–साहित्य**

दिनांक : **01/03/2024**

प्रस्तावना –

परसाई जी एक ऐसे प्रतिभा संपन्न लेखक हैं, जिन्होंने आवश्यकतानुसार परंपरागत विधा–लेखन के चौखटों को तोड़ा है। उनकी रचनाओं में कहानी, संस्मरण, रिपोर्ताज, रेखाचित्र, आत्मपरक निबंध, ललित निबंध, विचार प्रधान निबंध आदि विधाओं के मेल से नए समीकरण की निर्मिति होती दिखाई देती है। लिखते समय विधा की सीमा उनके लेखन की सीमा नहीं बनती। परसाई जी ने ख़ासतौर पर कहानी और निबंध को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने एक लघु उपन्यास, एक दीर्घ कथा, कुछ संस्मरण, रेखा–चित्र और एकाध ध्वनिरूपक की रचना भी की है, साथ ही साथ 'परसाई की खोज' विशेषांक में अनेक दुर्लभ रचनाओं को 'भारतीय लेखक' पत्रिका में प्रकाशित किया है, जो विभिन्न विधाओं के अंतर्गत आती हैं। इनमें कविता, लोककथा, एकांकी, प्रहसन, समीक्षा, खाका, आत्मस्वीकृति आदि विधाओं में रची गई रचनाएँ हैं। परंतु परसाई को व्यंग्य–चेतना के लिए निबंध की विधा अपनी प्रकृतिगत स्वच्छन्दता और व्यापकता के कारण अधिक अनुकूल प्रतीत हुई है। इन निबंधों में लेखक की व्यंग्य–दृष्टि चारों और परिव्याप्त विसंगतियों के प्रति भर्त्सनात्मक प्रतिक्रिया के रूप में व्यक्त हुई है।

परसाई जी ने निबंध के अतिरिक्त कहानी की विधा का भी सफल और सार्थक उपयोग किया है। उन्होंने लेखन की शुरूआत कहानी से ही की थी और इस विधा ने उन्हें काफी लोकप्रियता भी दिलायी। उन्होंने रूपविधान और संरचनात्मक विन्यास की दृष्टि से अपनी कहानियों में अनेक प्रयोग किये हैं। धनंजय वर्मा इनकी कहानियों के संदर्भ में लिखते हैं– "निबंध और टिप्पणियाँ, साक्षात्कार और संस्मरण रिपोर्ताज और रेखाचित्रों के विधागत मोटिव उनकी कहानियों में घुल–मिल गये हैं। इनमें पुराण कथा, दन्तकथा, बैताल–कथा, मिथक, प्रेमाख्यान, कपोल कल्पना, लघुकथाएँ, लंबी कहानियाँ, नाटकीय विन्यास, कैरीकेचर, पैरोडी, अन्योक्ति, दृष्टांत, प्रतीक कथा आदि सब कुछ मिल जाता है।'' अतः उनकी कहानियाँ परंपरागत तथा विधागत कहानियों से थोड़ी–सी भिन्न लगती हैं। लगती किस लिए हैं? क्योंकि अधिकांश रचनाकार विधा के नियमों से बँधे होते हैं और उन्हीं नियमों को आधार बनाकर साहित्य सृजन करते हैं। परंतु परसाई के साथ बात दूसरी है, अपनी बात को कहने के लिए वे किसी विधा के मोहताज कभी नहीं रहे। अपनी बात कही, विधा चाहे जो रही। शायद इसीलिए वे इतने प्रयोग भी कर गये। क्या यह संभव है कि इतने सारे प्रयोग एक साहित्यकार के द्वारा होते हों?

इस संदर्भ में प्रतिष्ठित साहित्यकार कमलेश्वर जी का मत महत्त्वपूर्ण है वे लिखते हैं– ''परसाई ने जो भी लिखा है उसे आप किसी भी विधा में बाँध नहीं सकते।'' यह किसी रचनाकार की विशेषता है तो सीमा भी हो सकती है। आलोचकों के समक्ष यह दुविधा सदैव बनी रही कि परसाई को किस खाते में डालें। क्योंकि उनके यहाँ कई विधाओं का सम्मिश्रण है। बात यहाँ तक भी है कि एक ही रचना में अन्य विधाओं का समावेश भी हो जाता है वो शायद इसलिए, कमलेश्वर जी के शब्दों में ''परसाई ने जिस तरह का गद्य लेखन किया था, जिस तरह का व्यंग्य–लेखन किया वो व्यंग्य लेखन अपने में अद्‌भुत प्रतीत होता है। प्रतीति किस बात की? वो इस बात की प्रतीति देता है कि जहाँ रचना केवल रचनात्मकता के लिए प्रस्तुत थी, वहाँ रचना केवल किताब

के लिए लिखी जाती थी, जहाँ रचना केवल पत्रिका के लिए लिखी जाती थी, वहाँ परसाई ने पहली बार अपने समय के मनुष्य के लिए लिखा।'' हो सकता है इसीलिए उन्हें अधिक प्रयोग करने पड़े हों। हिंदी व्यंग्य इतिहासकार सुभाष चन्दर जी ने भी माना है कि– ''परसाई जी ने व्यंग्य कथाओं में सबसे अधिक प्रयोग किये हैं। फैंटेसी, लोककथा, डायरी, संस्मरण, रेखाचित्र, रिपोर्ताज आदि सभी शैलियों में उनकी व्यंग्य कथाएँ मिलती हैं।'' इसी कारण ऊपरी लक्षणों के सहारे उनकी विधागत पहचान तय कर पाना मुश्किल होता है। उनकी रचनाधर्मिता में विधाओं के वैध सीमांत प्रायः एक–दूसरे में समा जाते हैं। क्योंकि परसाई जी ने विधा की अपेक्षा वर्ण्य को लेकर चौकस होने की ज्यादा कोशिश की। उनके यथार्थ के भीतर समकालीन मनुष्य के दो चेहरे हैं जो समाज के दो भिन्न ध्रुवों से आते हैं

व्यंग्य के सैद्धांतिक स्वरूप और प्रभाव आदि को गंभीरता एवं गहराई से समझने के लिए विविध भारतीय मनीषियों एवं पाश्चात्य चिंतकों के विचार एवं उनके द्वारा निर्धारित परिभाषाओं का अवलोकन करना अनिवार्य है। हिंदी साहित्य में प्रायः सभी विधाओं के अंतर्गत व्यंग्य के छींटे यत्र–तत्र बिखरे मिल जाते हैं। धर्म ग्रंथों, नीतिशास्त्रों, पुराणों, आख्यानों के साथ ही प्राचीनतम साहित्य ऋग्वेद, संस्कृत नाट्य साहित्य, सिद्ध और नाथ साहित्य में भी व्यंग्य कथन प्राप्त होते हैं। साहित्य के भक्तिकाल, रीतिकाल तथा आधुनिक काल के साहित्य की अविरल धारा में यदा–कदा परिवेश के अनुरूप व्यंग्य को प्रश्रय मिलता रहा है। परंतु एक स्वतंत्र दृष्टिकोण के साथ व्यंग्य – कथन का महत्त्व स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य के संदर्भ में विशेष रूप से दृष्टिगत होता है। प्राचीन साहित्य में श्रेष्ठ व्यंग्योक्तियाँ तो हैं पर आधुनिक व्यंग्य लेखन का शिल्प और दृ ष्टि उससे पर्याप्त भिन्न है। एक निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अथवा विशिष्ट स्थिति का उद्‌घाटन करके किसी भी विसंगति को लक्ष्य कर उस पर प्रहार किया जाए तभी व्यंग्य लेखन को अपेक्षित दिशा मिलती है। यद्यपि प्रत्येक साहित्यकार युगीन परिवेश के प्रति सजग होता है और परिवेश जनित

असमानताएँ उसे भी प्रभावित करती हैं, परंतु प्रतिक्रिया स्वरूप कोई तो अप्रत्यक्ष रूप से व्यंग्य प्रहार करता है तो कोई सीधे ही लक्ष्य पर प्रहार करता है। स्वतंत्रता पूर्व साहित्य में प्राप्त व्यंग्य अपरोक्ष रूप में मिलता है क्योंकि उसका प्रमुख लक्ष्य समाज सुधार और राष्ट्र को स्वतंत्र कराना था परंतु जिन विसंगतियों ने व्यंग्य को प्रत्यक्ष कटु एवं आक्रामक बनाया है वे संभवतः स्वतंत्रता के बाद उसे मिलीं। व्यंग्य की शाश्वत आवश्यकता और सार्थक भंगिमाओं को देखते हुए समय–समय पर भारतीय साहित्य में ही नहीं पाश्चात्य साहित्य में भी विद्वानों ने व्यंग्य क्षितिजों को स्पर्श कर उसके स्वरूप को व्याख्यायित करने का प्रयास किया है।

परसाई रचनावली के संपादक मण्डल में कमला प्रसाद, धनंजय वर्मा, श्याम कश्यप, मलय शामिल हैं।

संपादकों की ओर से दिये गये वक्तव्य में यह बात कही गयी है कि ''उनकी रचनाओं में कहानी, रिपोर्ताज, संस्मरण, रेखाचित्र, पत्रलेखन, साक्षात्कार, आत्मपरक निबंध, ललित निबंध, विचारप्रधान – विश्लेषणात्मक निबंध आदि विधाओं के कई मिले–जुले रूपांतर प्रस्तुत हुए हैं।'' परसाई की रचनाओं को पढ़कर यह निर्णय कर पाना कि ये कहानी हैं, संस्मरण हैं या रेखाचित्र हैं यह सहज काम नहीं है। इसके कारणों पर पहले ही चर्चा हो चुकी है। विद्वान आलोचकों एवं परसाई रचनावली खण्ड–एक में संपादक मण्डल ने भी यह बात स्वीकार की है।

परसाई रचनावली छः भागों में प्रकाशित है। परसाई जी की रचनाओं को रचनावली में संग्रहीत करने में बहुत कठिनाई हुई इसका कारण, संपादक मण्डल के शब्दों में ''इस रचनावली के संपादक मण्डल के समक्ष इस तरह निरंतर रचनाशील रचनाकार की रचनाओं को संकलित करने और वर्गीकृत करने की समस्या इस लंबे दौर में प्रकाशित रचनाओं को एकत्रित करने के अहम् प्रश्न के साथ जुड़ी रही है। प्रमुख समस्या सन् 1960 से पहले की

प्रकाशित रचनाओं को ढूँढ लेने की थी। इस अवधि में लिखी गयी रचनाएँ 'प्रहरी', 'परिवर्तन' और 'वसुधा' के सिवाय कई दूसरी पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं, इनमें से लगभग सभी पत्र–पत्रिकाएँ बंद हो चुकी हैं, और अब उनके पुराने अंक उपलब्ध कर पाना आसान नहीं है। रचनाकार के पास भी इन रचनाओं की प्रतियाँ उपलब्ध नहीं थी।''इसके बावजूद भी कठिन परिश्रम से यह कार्य संपन्न हो गया।

जो कठिनाई परसाई के रचना–संग्रह और रचनावली के अंतर्गत थी। अब रचनावली में संगृहीत रचनाओं को देखें तो उसमें भी संशय पैदा होता है। पहले खण्ड में लघु कथात्मक व्यंग्य रचनाएँ हैं और द्वितीय खण्ड में कहानियाँ। परसाई की पहले खण्ड में जो लघु कथात्मक व्यंग्य रचनाएँ हैं, उन्हें न केवल परसाई की बल्कि श्रेष्ठ हिंदी साहित्य की कहानियों में रख सकते हैं। इनमें वो कहानियाँ भी हैं जिनकी

विशेषता के बारे में प्रसिद्ध आलोचक मधुरेश जी ने भी चर्चा की है। ''इनमें 'सदाचार का ताबीज़', 'भोलाराम का जीव', 'मौलाना का लड़का पादरी की लड़की', 'जैसे उनके दिन फिरे', 'एक तृप्त आदमी की कहानी' पर मधुरेश जी चर्चा करते हैं। इनके अलावा 'एक लड़की पाँच दिवाने', 'भेड़ें और भेड़िये', 'चूहा और मैं', 'सुदामा के पावल', 'मेनका का तपोभंग', 'एकलव्य ने गुरु को अँगूठा दिखाया' आदि श्रेष्ठ कहानियाँ हैं, जिनको द्वितीय खण्ड में स्थान मिलना चाहिए था।

कहीं परसाई के निबंधों में कहानी घुसी हुई है, कही उनकी कहानियों की बाँहें निबंध मरोड़ रहा है। कहीं पत्र ने संपादकीय की शक्ल अख्तियार कर ली है, कहीं संस्मरण जीवनी बन गई है। हिंदी गद्य की परंपरागत विधाओं के स्वरूप को परसाई 'प्रहरी के अखाड़े में चीं बुलवा रहे हैं।' सच्चे अर्थों में परसाई ने समाज का सर्वेक्षण बहुत गहनता के साथ किया था। उस सर्वेक्षण के बाद जो निष्कर्ष निकले उनका प्रस्तुतीकरण उन्होंने साधारण शब्दों में कर

दिया। विधा की परवाह उन्होंने कभी नहीं की। 'आँखन देखी' में प्रकाशित लेख में मुरली मनोहर प्रसाद सिंह जी भी इस मत से सहमत हैं कि– ''कथा प्रयोग के वैविध्य के लिहाज से हरिशंकर परसाई ने गद्य की एक ऐसी विधा को सँवारा जो कहीं तो स्केच प्रतीत होती है, कहीं छोटा एकांकी, कहीं रिपोर्ताज, कहीं फीचर और कहीं ठीक कहानी जैसी, पर कहानी की विधा के साथ पूरी छेड़छाड़ की हिम्मत के साथ, गद्य की विविध विधाओं का सत निचोड़कर समकालीन यथार्थ की मुँह चिढ़ाती और अंतर्यामी तस्वीरों का अलबम पेश करने में परसाई ने अपूर्व कलाकौशल – कहना चाहिए नटधर्म और कार्टून तकनीक का परिचय दिया है।'' इस विधागत पहचान में साधारण आलोचक की बात तो छोड़ दीजिए हिंदी साहित्य के दिग्गज आलोचक भी भ्रमित होते हैं। हिंदी साहित्य के मूर्धन्य आलोचक नामवर सिंह जी को ले लीजिए उन्होंने परसाई की कहानियों के रचना– संग्रह के बारे में कहा– ''उस समय परसाई जी की इन कहानियों (''भोलाराम का जीवन', 'भूत के पाँव पीछे', 'जैसे उनके दिन फिरे) की ओर ध्यान जाना चाहिए था।'' नामवर जी 'भूत के पाँव पीछे संग्रह को भी कहानियों में ही सम्मिलित कर रहे हैं। दो अन्य कहानी के साथ–साथ वे 'भूत के पाँव पीछे' रचना–संग्रह को भी उन्हीं के साथ जोड़ देते हैं, जबकि परसाई के अनुसार यह निबंध संग्रह है। इसकी 'भूमिका' में उन्होंने लिखा है ''ये निबंध बिल्कुल नये नहीं हैं। पिछले 5–6 वर्षों में लिखे गये निबंधों में 21 यहाँ संग्रहीत हैं।''